IJCRT.ORG ISSN : 2320-2882

INTERNATIONAL JOURNAL OF CREATIVE RESEARCH THOUGHTS (IJCRT)

An International Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

बाल श्रम की प्रकृतिः समाजशास्त्रीय परिप्रेक्ष्य

देवकी मीणा

सहायक आचार्य (समाजशास्त्र विभाग)

एस. पी. सी. राजकीय महाविद्यालय,अजमेर (राजस्थान)

सार – बाल श्रम समाज व देश की एक ऐसी समस्या है जो समाज की नींव को खोखला कर रही है। आज भारत देश के साथ–साथ अनेक विकासशील देशों में बाल श्रम की समस्या एक घातक समस्या बन चुकी है। हमारे देश की व्यवस्था में यह अपनी जड़े जमा चुकी है। जिस आयु में बच्चे अपने माता–पिता के सुरक्षा कवच में रहते हैं उसी आयु में एक बाल श्रमिक को अपनी आयु से अधिक अनेक दायित्वों को निभाना पड़ता है , क्योंकि उसके सामने अपनी तथा अपने निर्धन परिवार की आजीविका चलाने के लिए काम करने के अतिरिक्त और कोई दूसरा विकल्प नहीं रहता है। बाल श्रमिकों को अनेक खतरनाक एवं घातक परिस्थितियों में काम करने को मजबूर होना पड़ता है। इसके अनेक दुष्परिणाम उनको भुगतने पड़ते हैं। यद्यपि बाल श्रम को रोकने हेतु अनेक कानूनी प्रावधान है। फिर भी बाल श्रमिकों की समस्या समाज की सच्चाई है। समाज में विद्यमान अनेक कारण जैसे कि अशिक्षा, गरीबी, बेरोजगारी, परिवार का बड़ा आकार, जागरूकता की कमी आदि बाल श्रम के लिए उत्तरदायी है।

संकेत शब्द – बाल श्रमिक, आय–उपार्जक, सामाजिक समस्या, विकृत मानसिकता

बच्चे किसी भी देश एवं समाज की नींव होते हैं, जो भविष्य के कर्णधार है। इसी बात को ध्यान में रखते हुए भारतीय संविधान में बच्चों के अधिकारों एवं उनके प्रति कर्तव्यों का उल्लेख किया गया है। जिससे बच्चों को उनके अधिकार प्राप्त हो सके। परंतु वास्तविक धरातल पर देखें तो वर्तमान में लगभग सभी समाजों में बाल श्रमिकों की संख्या निरंतर बढ़ती जा रही है । इसके साथ ही बाल श्रमिकों से संबंधित समस्याएं एवं इसके दुष्परिणामों में भी वृद्धि हो रही है। यद्यपि इनको रोकने के लिए अनेक प्रयास भी सरकारी तथा गैर सरकारी स्तर पर किए जा रहे हैं।

बाल श्रम की अवधारणा –

बाल श्रम शब्द का बोध उस बाल जनसंख्या के द्वारा किया गया श्रम है जिससे उन्हें अर्थ प्राप्त होता है। वे बच्चे बाल श्रमिक माने जाते हैं जो अपने निर्धन परिवार की आय बढ़ाने हेतु परिस्थितिवश विभिन्न कार्यों में संलग्न है तथा परिवार में एक आय–उपार्जक सदस्य के रूप में रह रहे हैं। बाल श्रमिक की आयु बाल श्रमिकों के निर्धारण में एक महत्वपूर्ण पक्ष है अर्थात् कितनी आयु के कार्यरत बालकों को बाल श्रमिक की श्रेणी में रखा जाए। इस संदर्भ में भिन्न–भिन्न दृष्टिकोण हैं जैसे कि संयुक्त राष्ट्र संघ के अनुसार 18 वर्ष से कम आयु वाले श्रमिक को बाल श्रमिक माना जाता है। अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन के अनुसार 15 वर्ष या उससे कम आयु के श्रमिक को बाल श्रमिक की श्रेणी में रखा गया है। भारतीय संविधान के अनुसार वे बच्चे जो 14 वर्ष या उससे कम आयु में ही रोजगार में संलग्न है बाल श्रमिक कहलाते हैं। यदि बाल श्रमिकों की निम्नतम आयु पर विचार करें तो यह 5 वर्ष हो सकती है, क्योंकि 5 वर्ष से कम आयु के बच्चे इतने सक्षम नहीं होते कि वे किसी भी लाभदायक आर्थिक गतिविधियों में लग सके। इसलिए 5 से 14 वर्ष की आयु के अंतर्गत आने वाले श्रमिकों को बाल श्रमिक माना गया है।

बाल श्रमिक की परिभाषा देखें तो समय–समय पर विभिन्न समाजशास्त्रियों, बुद्धिजीवियों, सरकारी एवं गैर सरकारी संगठनों तथा अंतरराष्ट्रीय संगठनों के द्वारा बाल श्रमिक के संदर्भ में अलग–अलग मत प्रस्तुत किए गए हैं। जे.सी. कुलश्रेष्ठ के अनुसार, "श्रम की वह अवस्था जिसमें बच्चों को लाभप्रद व्यवसाय की सेवारत अवस्था प्राप्त होती है तथा इस काल में उनके शारीरिक विकास को नुकसान होता है और उनमें अपने विकास के अवसर नकारात्मक होते हैं।" एम.के. सिंह के अनुसार "बाल श्रमिक का अर्थ एक कार्य करने वाले उस बच्चे से हैं जो 6 से 15 वर्ष के बीच की आयु का है, जो दिन में विद्यालय नहीं जा रहा है, जो एक नियोक्ता के अधीन कार्य कर रहा है या जो एक शिष्य के रूप में व्यावसायिक प्रशिक्षण ले रहा है। वी. वी. गिरी ने बाल श्रम को परिभाषित करते हुए कहा है कि बाल श्रम एक ओर आर्थिक व्यवहार है तो दूसरी ओर एक सामाजिक बुराई भी है। आर्थिक व्यवहार के रूप में यह विवादास्पद है कि केवल वेतनिक कार्यों को ही बाल श्रम के अंतर्गत लिया जाए या अवेतनिक कार्यों को भी इसमें सम्मिलित किया जाये, क्योंकि बच्चे घर की सफाई, पशुपालन, खेती के काम आदि सभी में हाथ बटांते हैं।

बाल श्रम की प्रकृति –

बाल श्रम की प्रकृति एक सामाजिक समस्या की है, क्योंकि आज बाल श्रम की समस्या अंतरराष्ट्रीय स्तर पर फैल चुकी है। एक ओर जहां भारत जैसे जनाधिक्य वाले निर्धन और विकासशील राष्ट्रों में यह समस्या पीड़ा जनक दौड़ से गुजर रही है वहीं दूसरी ओर विकसित राष्ट्रों में यह समस्या एक मानवीय अपराध और सामाजिक अभिशाप के रूप में अनेक बुराइयों को जन्म दे रही है। बाल श्रम से संबंधित अनेक अध्ययन किए गए हैं जिनमें से कुछ निम्न प्रकार है –

- फील्डमेन (1982) के अनुसार बाल श्रम का एक कारण हिंसा व लैंगिक दुर्व्यवहार है। माता–पिता, संरक्षक, मलिक के द्वारा बालकों को पिटा जाना, प्रताड़ित किया जाना ,भूखा रखना आदि से बाल श्रम की मजबूरी उत्पन्न होती

है। शारीरिक प्रताड़ना का एक घिनौना रूप लैंगिक हिंसा है जिससे बाल श्रमिकों को प्रताड़ित किया जाता है । लैंगिक हिंसा में लड़कियां लड़कों की अपेक्षा लैंगिक दुर्व्यवहार की अधिक शिकार होती है।

- शरद ,एन. के.(1988) ने भारतीय बच्चों के सामाजिक– आर्थिक एवं कानूनी अधिकारों पर किए गए अपने अध्ययनों में पाया कि देश में लाखों बच्चे बाल अधिकारों से वंचित है एवं शोषण का शिकार है । बाल श्रमिक के रूप में यह बच्चे वयस्क श्रमिक से भी अधिक श्रम करते हैं। उनके द्वारा कमाई गई राशि का उपयोग अभिभावकों द्वारा किया जाता है। अभिभावक तथा कारखाना मालिक अपने–अपने स्वार्थ के कारण इनसे श्रम करते हैं।
- वोल्फ (1987) के अनुसार बाल श्रमिकों की एक बड़ी संख्या छोटे कमरों में अमानवीय स्थितियों और अस्वास्थ्यकर वातावरण में रहती है। इनमें से अधिकांश बच्चे बहुत ही निर्धन परिवार के होते हैं। वे या तो स्कूल छोड़े हुए होते हैं या कभी भी स्कूल गए ही नहीं। उन्हें बहुत कम मजदूरी मिलती है और वे अत्यंत खतरनाक परिस्थितियों में काम करते हैं।
- जोशी, उमा (1986) के अनुसार बाल श्रमिक स्वास्थ्य रूप से अत्यंत गंभीर स्थिति में होते है । बाल श्रमिकों को फेफड़े की बीमारियां, आंख की बीमारियां ,अस्थमा, ब्रोंकाइटिस ,कमर दर्द आदि अनेक बीमारियां होती है। कुछ बाल श्रमिक आग तथा अन्य दुर्घटनाओं में जख्मी हो जाते हैं और यदि वे जख्मी या अपंग हो जाते हैं तो मालिक द्वारा उन्हें निर्दयतापूर्ण निकाल दिया जाता है।
- केवलरमानी (1992) ने बाल दुर्व्यवहार पर किए गए अध्ययन में पाया कि अभिभावको द्वारा बच्चों से उनकी मर्जी के विरुद्ध श्रम कराने से बच्चों के जीवन में अत्यधिक प्रभाव पड़ता है। सर्वप्रथम तो बच्चों में स्वाभिमान का लोप होता है। वे बच्चे जिनके साथ दुर्व्यवहार होता है अपने लिए एक नकारात्मक रूप अपना लेते हैं। दूसरा प्रभाव विकृत मानसिकता का निर्माण होना है। ऐसे बच्चों के मानसिक रूप से विकृत होने की संभावना अधिक रहती है। जिसके कारण ये बच्चे अपराधिक गतिविधियों में संलग्न हो जाते हैं। तीसरा प्रभाव समाज से घृणा होना। ऐसे बच्चों को ना तो पीड़ा दूर करने के लिए अभिभावकों का का सहयोग मिलता है और ना ही समाज का , ऐसे में इनमें सामाजिक घृणा का भाव उत्पन्न होने लगता है। इन सभी के प्रभाव से बच्चों में नशे और अपराध की प्रवृत्ति बढ़ने लगती है।

बाल श्रम की संरचना –

भारत में वर्ष 2011 के जनगणना आंकड़ों के अनुसार 5 से 14 वर्ष के आयु वर्ग के बाल श्रमिकों की कुल संख्या 10.12 मिलियन है। विश्व में यह संख्या 217 मिलियन पाई गई है। एशिया में काम करने वाले बाल श्रमिकों की संख्या अत्यधिक है जो कि विश्व के कुल बच्चों का 60 प्रतिशत है।

यदि हम भारत में शहरी तथा ग्रामीण क्षेत्रों में काम करने वाले बाल श्रमिकों की स्थिति को देखें तो इसमें भिन्नता पाई जाती है। शहरी क्षेत्र में बच्चे मजदूरों का काम छोटे उद्योगों और कार्यशालाओं में बीड़ी, आतिशबाजी या दियासलाई बनाने अथवा कांच और चूड़ियां बनाने, कालीनों की बुनाई, हथकरघा, हीरो की पॉलिश, कागज के लिफाफे, प्लास्टिक की चीजें बनाने तथा मत्स्य संसाधन जैसे काम करते हैं। दियासलाई और आतिशबाजी बनाने के उद्योगों में बड़ी संख्या में बहुत कम उम्र के बच्चे काम करते हैं। वे निर्माण स्थलों, पत्थर के खानों में तथा माल ढ़ोने और उतारने के कामों में भी संलग्न रहते हैं। इसी प्रकार होटलों और ढाबों में चाय और खाना देने का काम या दूध और सब्जी बेचने अथवा घरेलू नौकरों, अखबार

बेचने, गाड़ी साफ करने वालों का काम करते हैं। गंदी बस्तियों के बच्चे कुलियों तथा आश्रित श्रमिकों के रूप में कार्य करते हैं। शोध अध्ययन में यह पाया गया कि शहरी तथा महानगरी इलाकों में बाल श्रमिकों का एक बड़ा हिस्सा बेकार बच्चों का होता है । ये ऐसे बच्चे हैं जिनके घर नहीं होते हैं और ये फुटपाथ पर रहते हैं। इसी प्रकार ग्रामीण क्षेत्रों में बाल श्रमिकों पर किए गए अध्ययनों से यह पता चलता है कि ग्रामीण क्षेत्रों में बाल श्रमिकों की संख्या अत्यधिक है। इन क्षेत्रों में अधिकांश बाल श्रमिक भूमिहीन कृषक परिवारों में केंद्रित होते हैं। विशेष कर कृषि, पशुपालन तथा खाद्य संसाधन, बुनाई ,दस्तकारी ,बीड़ी, पापड़ आदि बनाने जैसे गृह आधारित उद्योगों में ये बाल श्रमिक काम करते हैं । ग्रामीण तथा शहरी क्षेत्र में बच्चे अवेतनिक पारिवारिक श्रमिकों के रूप में अथवा मालिकों के घरों में या परिवारों द्वारा किया जाने वाला ठेके के काम में, अपने ही परिवार के छोटे खेतों में या उद्योगों में काम करते हैं । घर में किए गए काम का उन्हें न तो वेतन मिलता है और न ही शाबाशी मिलती है। सामान्यतः घरों में किया जाने वाला काम कम शोषणकारी माना जाता है, लेकिन अधिकांश परिवार के भीतर भी बच्चों के साथ दुर्व्यवहार होता है तथा कठिन परिस्थितियों में लंबे समय तक उन्हें काम करना पड़ता है। हमारे देश में अधिकांश बाल श्रमिक ऐसी स्थितियों में होते हैं। जहां उन्हें मजबूरन काम करना पड़ता है। उन्हें न सिर्फ अपने जीवित रहने के लिए काम करना पड़ता है, बल्कि अपने परिवार के सदस्यों के जीवित रहने के लिए भी मजबूरी में काम करना पड़ता है। उन्हें ऐसी अस्वास्थ्यकर तथा असुरक्षित स्थितियों में काम करना पड़ता है जो एक इंसान के विकास के लिए हानिकारक है । ये बच्चे अधिकांश निरक्षर ही रहते हैं और शारीरिक गठन में भी बीमार दिखते हैं। ऐसी स्थितियों में गुंजाइश इस बात की है कि वे निरक्षर ,कुंठित तथा अस्वस्थ नागरिकों के रूप में ही बड़े होंगे।

निष्कर्ष –

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि आज बाल श्रम की समस्या हमारे सामाजिक जीवन का एक अभिशाप है ।संगठित श्रमिकों की तरह ये बाल श्रमिक अपने ऊपर होने वाले अत्याचार व शोषण के विरुद्ध आवाज नहीं उठा सकते। अतः इन बच्चों को शोषण मुक्त जीवन जीने का अधिकार सुनिश्चित कराना हमारा दायित्व है। इस समस्या का उन्मूलन एक सामाजिक चुनौती है । केंद्र और राज्य सरकारों को भी इस स्थिति की ओर ध्यान देना चाहिए। आखिर यह बच्चे देश तथा समाज के भावी नागरिक है। क्या देश के इन मासूम कर्णधारो को परिस्थितियों के हवाले छोड़ देना उचित है ? अतः किसी को भी उनके साथ खिलवाड़ की अनुमति नहीं दी जा सकती ,चाहे वे उनके अभिभावक ही क्यों ना हो।

संदर्भ ग्रंथ –

1. आहूजा, राम (2011) सामाजिक समस्याएं. जयपुरः रावत पब्लिकेशंस.
2. दीक्षित, डी.के. (2002) बाल श्रम उन्मूलन : एक चुनौती. इलाहाबादः अविष्कार पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स.
3. लीला, वी. (1972) कास्टिंग चाइल्ड वेलफेयर पॉलिसीज एंड प्रैक्टिस. न्यू दिल्लीः मैग्राहिल.
4. नांगिया, परवीन (1987) चाइल्ड लेबर : कॉज इफेक्ट सिंड्रोम. न्यू दिल्ली : जनक पब्लिशर्स.
5. पांडेय, मंजू (2002) भारत में बाल श्रमिक. इलाहाबादः मानक पब्लिकेशन प्राइवेट लिमिटेड.
6. केवलरमानी, जी.एस.(1992) चाइल्ड एब्यूज. जयपुर :रावत पब्लिकेशन.
7. डीसूजा, वी.एस.(1986) आर्थिक विकास सामाजिक संरचना और जनसंख्या वृद्धि. नई दिल्लीः सेज पब्लिकेशंस.

8. सक्सेना,एस.सी. (2009) लेबर प्रॉब्लम एंड सोशल सिक्योरिटी. ग्वालियरः राधा पब्लिकेशन.

9. गुप्ता, एम.एल. (2015) भारत में समाज. जयपुरः राजस्थान हिन्दी अकादमी.